2 प्रेमचन्द

जीवन-परिचय—उपन्यास सम्राट् प्रेमचन्द का जन्म एक गरीब घराने में काशी से चार मील दूर लमही नामक गाँव में 31 जुलाई, 1880 ई० को हुआ था। इनके पिता अजायब राय डाक-मुंशी थे। सात साल की अवस्था में माता का और चौदह वर्ष की अवस्था में पिता का देहान्त हो गया। घर में यों ही बहुत निर्धनता थी, पिता की मृत्यु के पश्चात् इनके सिर पर कठिनाइयों का पहाड़ टूट पड़ा। रोटी कमाने की चिन्ता बहुत जल्दी इनके सिर पर आ पड़ी। ट्यूशन करके इन्होंने मैट्रिक की परीक्षा पास की। आपका विवाह कम उम्र में हो गया था, जो इनके अनुरूप नहीं था, अतः शिवरानी देवी के साथ दूसरा विवाह किया।

लेखक-एक संक्षिप्त परिचय

- **जन्म-स्थान**—लमही (वाराणसी), उ०प्र०।
- **जन्म एवं मृत्यु सन्**—1880 ई०, 1936 ई०।
- **पिता**—अजायब राय।
- **माता**—आनन्दी देवी।
- **प्रमुख कृतियाँ**—गोदान, गबन, सेवासदन, प्रेमाश्रम, निर्मला, कर्मभूमि, रंगभूमि।
- शुक्ल-युग के लेखक।
- **बचपन का नाम**—धनपत राय।
- **हिन्दी साहित्य में स्थान**—एक श्रेष्ठ कहानी एवं उपन्यास सम्राट के रूप में चर्चित।

स्कूल-मास्टरी की नौकरी करते हुए इन्होंने एफ० ए० और बी० ए० पास किया। स्कूल-मास्टरी के रास्ते पर चलते-चलते सन् 1921 में वह गोरखपुर में स्कूलों के डिप्टी इन्स्पेक्टर बन गये। जब गाँधीजी ने सरकारी नौकरी से इस्तीफे का बिगुल बजाया तो उसे सुनकर प्रेमचन्द ने भी तुरन्त त्याग-पत्र दे दिया। उसके बाद कुछ दिनों तक इन्होंने कानपुर के मारवाड़ी स्कूल में अध्यापन किया फिर 'काशी विद्यापीठ' में प्रधान अध्यापक नियुक्त हुए। इसके बाद अनेक पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन करते हुए काशी में प्रेस खोला। सन् 1934-35 में आपने आठ हजार रुपये वार्षिक वेतन पर मुम्बई की एक फिल्म कम्पनी में नौकरी कर ली। जलोदर रोग के कारण 8 अक्टूबर, 1936 ई० को काशी स्थित इनके गाँव में इनका देहावसान हो गया।

साहित्यिक परिचय—प्रेमचन्द जी में साहित्य-सृजन की जन्मजात प्रतिभा विद्यमान थी। आरम्भ में 'नवाब राय' के नाम से उर्दू भाषा में कहानियाँ और उपन्यास लिखते थे। इनकी 'सोजे वतन' नामक क्रान्तिकारी रचना ने स्वाधीनता-संग्राम में ऐसी हलचल मचायी कि अंग्रेज सरकार ने इनकी यह कृति जब्त कर ली। बाद में 'प्रेमचन्द' नाम रखकर हिन्दी साहित्य की साधना की और लगभग एक दर्जन उपन्यास और तीन सौ कहानियाँ लिखीं। इसके अतिरिक्त इन्होंने 'माधुरी' तथा 'मर्यादा' पत्रिकाओं का सम्पादन किया तथा 'हंस' व 'जागरण' नामक पत्र का प्रकाशन किया। जनता की बात जनता की भाषा में कहकर तथा

अपने कथा साहित्य के माध्यम से तत्कालीन निम्न एवं मध्यम वर्ग का सच्चा चित्र प्रस्तुत करके प्रेमचन्द जी भारतीयों के हृदय में समा गये। सच्चे अर्थों में 'कलम के सिपाही' और जनता के दुःख-दर्द के गायक इस महान् कथाकार को भारतीय साहित्य-जगत् में 'उपन्यास सम्राट्' की उपाधि से विभूषित किया गया।

कृतियाँ–प्रेमचन्द जी की निम्नलिखित कृतियाँ उल्लेखनीय हैं–

(1) उपन्यास–'कर्मभूमि', 'कायाकल्प', 'निर्मला', 'प्रतिज्ञा', 'प्रेमाश्रम', 'वरदान', 'सेवासदन', 'रंगभूमि', 'गबन', 'गोदान', 'मंगलसूत्र'।

(2) नाटक–'कर्बला', 'प्रेम की वेदी', 'संग्राम' और 'रूठी रानी'।

(3) जीवन-चरित–'कलम', 'तलवार और त्याग', 'दुर्गादास', 'महात्मा शेखसादी' और 'राम चर्चा'।

(4) निबन्ध-संग्रह–'कुछ विचार'।

(5) सम्पादित–'गल्प रत्न' और 'गल्प-समुच्चय'।

(6) अनूदित–'अहंकार', 'सदासुख', 'आजाद-कथा', 'चाँदी की डिबिया', 'टॉलस्टाय की कहानियाँ' और 'सृष्टि का आरम्भ'।

(7) कहानी-संग्रह–(1) 'सप्त सरोज', (2) 'नवनिधि', (3) 'प्रेम पूर्णिमा', (4) 'प्रेम पचीसी', (5) 'प्रेम प्रतिमा', (6) 'प्रेम द्वादशी', (7) 'समर-यात्रा', (8) 'मानसरोवर', (9) 'कफन'।

भाषा-शैली–प्रेमचन्द जी की भाषा के दो रूप हैं–एक रूप तो वह है, जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की प्रधानता है और दूसरा रूप वह है, जिसमें उर्दू, संस्कृत, हिन्दी के व्यावहारिक शब्दों का प्रयोग किया गया है। यह भाषा अधिक सजीव, व्यावहारिक और प्रवाहमयी है। इनकी भाषा सहज, सरल, व्यावहारिक, प्रवाहपूर्ण, मुहावरेदार एवं प्रभावशाली है। प्रेमचन्द विषय एवं भावों के अनुरूप शैली को परिवर्तित करने में दक्ष थे। इन्होंने अपने साहित्य में प्रमुख रूप से पाँच शैलियों का प्रयोग किया है–(1) वर्णनात्मक, (2) विवेचनात्मक, (3) मनोवैज्ञानिक, (4) हास्य-व्यंग्यप्रधान शैली तथा (5) भावात्मक शैली।

'मन्त्र' प्रेमचन्द की एक मर्मस्पर्शी कहानी है, जो उच्च एवं निम्न स्थिति के भेदभाव पर आधारित है जिसमें लेखक ने विरोधी घटनाओं, परिस्थितियों और भावनाओं का चित्रण करके कर्त्तव्य-बोध का मार्ग दिखाया है। पाठक मन्त्र-मुग्ध होकर पूरी कहानी को पढ़ जाता है।

●●●

मन्त्र

सन्ध्या का समय था। डॉक्टर चड्ढा गोल्फ खेलने के लिए तैयार हो रहे थे। मोटर कार सामने खड़ी थी कि दो कहार एक डोली लिये आते दिखायी दिये। डोली के पीछे बूढ़ा लाठी टेकता चला आ रहा था। डोली औषधालय के सामने आकर रुक गयी। बूढ़े ने धीरे-धीरे आकर द्वार पर पड़ी हुई चिक से झाँका। ऐसी साफ-सुथरी जमीन पर पैर रखते हुए भय हो रहा था कि कोई घुड़क न बैठे। डॉक्टर साहब को मेज के सामने खड़े देखकर भी कुछ कहने का साहस न हुआ।

डॉक्टर साहब ने चिक के अन्दर से गरजकर कहा–कौन है? क्या चाहता है? बूढ़े ने हाथ जोड़कर कहा–हुजूर, बड़ा गरीब आदमी हूँ। मेरा लड़का कई दिन से.....।

डॉक्टर साहब ने सिगार जलाकर कहा–कल सबेरे आओ, कल सबेरे; हम इस वक्त मरीजों को नहीं देखते।

बूढ़े ने घुटने टेककर जमीन पर सिर रख दिया और बोला–दुहाई है सरकार की, लड़का मर जायगा। हुजूर चार दिन से आँखें नहीं.....।

डॉक्टर चड्ढा ने कलाई पर नजर डाली केवल दस मिनट समय और बाकी था, गोल्फ स्टिक खूँटी से उतारते हुए बोले–कल सवेरे आओ, कल सवेरे; यह हमारे खेलने का समय है।

बूढ़े ने पगड़ी उतारकर चौखट पर रख दी और रोकर बोला–हुजूर, एक निगाह देख लें! बस, एक निगाह! लड़का हाथ से चला जायगा हुजूर। सात लड़कों में यही एक बच रहा है हुजूर! हम दोनों आदमी रो-रो मर जायँगे, सरकार! आपकी बढ़ती होय, दीनबन्धु!

ऐसे उजड्ड देहाती यहाँ प्रायः रोज आया करते थे। डॉक्टर साहब उनके स्वभाव से खूब परिचित थे। कोई कितना ही कुछ कहे, पर वे अपनी ही रट लगाते जायँगे, किसी की सुनेंगे नहीं। धीरे से चिक उठायी और बाहर निकलकर मोटर की तरफ चले। बूढ़ा यह कहता हुआ उनके पीछे दौड़ा–सरकार, बड़ा धरम होगा। हुजूर दया कीजिए, बड़ा दीन-दुःखी हूँ, संसार में कोई नहीं है, बाबूजी।

मगर डॉक्टर साहब ने उसकी ओर मुँह फेरकर देखा तक नहीं। मोटर पर बैठकर बोले–कल सवेरे आना।

मोटर चली गयी। बूढ़ा कई मिनट तक मूर्ति की भाँति निश्चल खड़ा रहा। संसार में ऐसे मनुष्य भी होते हैं, जो अपने आमोद-प्रमोद के आगे किसी की जान की भी परवाह नहीं करते, शायद इसका उसे अब भी विश्वास न आता था। सभ्य संसार इतना निर्मम, इतना कठोर है, इसका ऐसा मर्मभेदी अनुभव अब तक न हुआ था। वह उन पुराने जमाने के जीवों में था, जो लगी हुई आग को बुझाने, मुर्दे को कन्धा देने, किसी के छप्पर को उठाने और किसी कलह को शान्त करने के लिए सदैव तैयार रहते थे। जब तक बूढ़े को मोटर दिखायी दी, वह खड़ा टकटकी लगाये उस ओर ताकता रहा। शायद उसे अब भी डॉक्टर साहब के लौट आने की आशा थी। फिर उसने कहारों से डोली उठाने को कहा। डोली जिधर से आयी थी, उधर ही चली गयी। चारों ओर से निराश होकर वह डॉक्टर चड्ढा के पास आया था। इनकी बड़ी तारीफ सुनी थी। यहाँ से निराश होकर फिर वह किसी दूसरे डॉक्टर के पास न गया। किस्मत ठोक ली!

उसी रात को उसका हँसता-खेलता सात साल का बालक अपनी बाललीला समाप्त करके इस संसार से सिधार गया। बूढ़े माँ-बाप के जीवन का यही एक आधार था। इसी का मुँह देखकर वे जीते थे। इस दीपक के बुझते ही जीवन की अँधेरी रात भायँ-भायँ करने लगी। बुढ़ापे की विशाल ममता टूटे हुए हृदय से निकलकर उस अन्धकार में आर्तस्वर से रोने लगी।

× × ×

कई साल गुजर गये। डॉक्टर चड्ढा ने खूब यश और धन कमाया, लेकिन इसके साथ ही अपने स्वास्थ्य की रक्षा भी की, जो एक असाधारण बात थी। यह उनके नियमित जीवन का आशीर्वाद था कि पचास वर्ष की अवस्था में भी उनकी चुस्ती और फुर्ती युवकों को भी लज्जित करती थी। उनके हर एक काम का समय नियत था, इस नियम से वह जौ-भर भी न टलते थे। बहुधा लोग स्वास्थ्य के नियमों का पालन उस समय करते हैं, जब रोगी हो जाते हैं। डॉक्टर चड्ढा उपचार और संयम का रहस्य खूब समझते थे। उनकी सन्तान-संख्या भी इसी नियम के अधीन थी। उनके केवल दो बच्चे हुए, एक लड़का और एक लड़की। तीसरी सन्तान न हुई। इसलिए श्रीमती चड्ढा भी अभी जवान मालूम होती थीं। लड़की का तो विवाह हो चुका था। लड़का कॉलेज में पढ़ता था। वही माता-पिता के जीवन का आधार था। शील और विनय का पुतला, बड़ा ही रसिक, बड़ा ही उदार, विद्यालय का गौरव, युवक-समाज की शोभा। मुख-मण्डल से तेज की छटा-सी निकलती थी। आज उसी की बीसवीं सालगिरह थी।

सन्ध्या का समय था। हरी-हरी घास पर कुर्सियाँ बिछी हुई थीं। शहर के रईस और हुक्काम एक तरफ, कॉलेज के छात्र दूसरी तरफ बैठे भोजन कर रहे थे। बिजली के प्रकाश से सारा मैदान जगमगा रहा था। आमोद-प्रमोद का सामान भी जमा था। छोटा-सा प्रहसन खेलने की तैयारी थी। प्रहसन स्वयं कैलाशनाथ ने लिखा था। वही मुख्य ऐक्टर भी था। इस समय वह एक रेशमी कमीज पहने, नंगे सिर, नंगे पाँव इधर-से-उधर मित्रों की आवभगत में लगा हुआ था। कोई पुकारता–'कैलाश, जरा इधर तो आना। कोई उधर से बुलाता–कैलाश, क्या उधर ही रहोगे?' सभी उसे छेड़ते थे, चुहलें करते थे, बेचारे को जरा दम मारने का भी अवकाश न मिलता था। सहसा एक रमणी ने उसके पास आकर कहा–क्यों कैलाश, तुम्हारा साँप कहाँ है? जरा मुझे दिखा दो।

कैलाश ने उससे हाथ मिलाकर कहा–मृणालिनी, इस वक्त क्षमा करो, कल दिखा दूँगा।

मृणालिनी ने आग्रह किया–जी नहीं, तुम्हें दिखाना पड़ेगा, मैं आज नहीं मानने की। तुम रोज 'कल-कल' करते हो।

मृणालिनी और कैलाश दोनों सहपाठी थे और एक-दूसरे के प्रेम में पगे हुए। कैलाश को साँपों के पालने, खेलाने और नचाने का शौक था। तरह-तरह के साँप पाल रखे थे। उनके स्वभाव और चरित्र की परीक्षा करता रहता था। थोड़े दिन हुए, उसने विद्यालय में साँपों पर एक मार्के का व्याख्यान दिया था। साँपों को नचाकर दिखाया भी था। प्राणिशास्त्र के बड़े-बड़े पण्डित भी यह व्याख्यान सुनकर दंग रह गये थे। यह विद्या उसने एक बूढ़े सँपेरे से सीखी थी। साँपों की जड़ी-बूटियाँ जमा करने का उसे मर्ज था। इतना पता भर मिल जाय कि किसी व्यक्ति के पास कोई अच्छी जड़ी है, फिर उसे चैन न आता था। उसे लेकर ही छोड़ता था। यही व्यसन था। इस पर हजारों रुपये फूँक चुका था। मृणालिनी कई बार आ चुकी थी, पर कभी साँपों को देखने के लिए इतनी उत्सुक न हुई थी। कह नहीं सकते, आज उसकी उत्सुकता सचमुच जाग गयी थी या वह कैलाश पर अपने अधिकार का प्रदर्शन करना चाहती थी, पर उसका आग्रह बेमौका था। उस कोठरी में कितनी भीड़ लग जायगी, भीड़ को देखकर साँप कितने चौंकेंगे और रात के समय उन्हें छेड़ा जाना कितना बुरा लगेगा, इन बातों का उसे जरा भी ध्यान न आया।

कैलाश ने कहा–नहीं, कल जरूर दिखा दूँगा। इस वक्त अच्छी तरह दिखा भी न सकूँगा, कमरे में तिल रखने की भी जगह न मिलेगी।

एक महाशय ने छेड़कर कहा–दिखा क्यों नहीं देते, जरा-सी बात के लिए इतना टाल-मटोल कर रहे हो? मिस गोविन्द हर्गिज न मानना। देखें, कैसे नहीं दिखाते।

दूसरे महाशय ने और रद्दा चढ़ाया–मिस गोविन्द इतनी सीधी और भोली हैं, तभी आप इतना मिजाज करते हैं, दूसरी सुन्दरी होती, तो इसी बात पर बिगड़ खड़ी होती।

तीसरे साहब ने मजाक उड़ाया–'अजी बोलना छोड़ देती। भला, कोई बात है। इस पर आपको दावा है कि मृणालिनी के लिए जान हाजिर है।' मृणालिनी ने देखा कि ये शोहदे उसे रंग पर चढ़ा रहे हैं तो बोली–'आप लोग मेरी वकालत न करें, मैं खुद अपनी वकालत कर लूँगी। मैं इस वक्त साँपों का तमाशा नहीं देखना चाहती। चलो, छुट्टी हुई।'

इस पर मित्रों ने ठहाका लगाया। एक साहब बोले–देखना तो आप सब-कुछ चाहें, पर कोई दिखाये भी तो?

कैलाश को मृणालिनी की झेंपी हुई सूरत देखकर मालूम हुआ कि इस वक्त उसका इनकार वास्तव में उसे बुरा लगा है। ज्यों ही प्रीतिभोज समाप्त हुआ और गाना शुरू हुआ, उसने मृणालिनी और अन्य मित्रों को साँपों के दरबे के सामने ले जाकर

महुअर बजाना शुरू किया। फिर एक-एक खाना खोलकर एक-एक साँप को निकालने लगा। वाह! क्या कमाल था! ऐसा जान पड़ता था कि वे कीड़े उसकी एक-एक बात, उसके मन का एक-एक भाव समझते हैं। किसी को उठा लिया, किसी को गर्दन में डाल लिया, किसी को हाथ में लपेट लिया। मृणालिनी बार-बार मना करती कि उन्हें गर्दन में न डालो, दूर ही से दिखा दो। बस जरा नचा दो। कैलाश की गर्दन में साँपों को लिपटते देखकर उसकी जान निकल जाती थी। पछता रही थी कि मैंने व्यर्थ ही इनसे साँप दिखाने को कहा, मगर कैलाश एक न सुनता था। प्रेमिका के सम्मुख अपने सर्प-कला प्रदर्शन का ऐसा अवसर पाकर वह कब चूकता। एक मित्र ने टीका की–'दाँत तोड़ डाले होंगे।'

कैलाश हँसकर बोला–'दाँत तोड़ डालना मदारियों का काम है। किसी के दाँत नहीं तोड़े गये हैं। कहिये तो दिखा दूँ?' कहकर उसने एक काले साँप को पकड़ लिया और बोला–'मेरे पास इससे बड़ा और जहरीला साँप दूसरा नहीं है। अगर किसी को काट ले, तो आदमी आनन-फानन में मर जाय। लहर भी न आये। इसके काटे का मन्त्र नहीं। इसके दाँत दिखा दूँ।'

मृणालिनी ने उसका हाथ पकड़कर कहा–'नहीं-नहीं, कैलाश, ईश्वर के लिए उसे छोड़ दो। तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ।'

इस पर दूसरे मित्र बोले–'मुझे तो विश्वास नहीं आता, लेकिन तुम कहते हो, तो मान लूँगा।'

कैलाश ने साँप की गर्दन पकड़कर कहा–'नहीं साहब, आप आँखों से देखकर मानिये। दाँत तोड़कर वश में किया तो क्या किया! साँप बड़ा समझदार होता है। अगर उसे विश्वास हो जाय कि इस आदमी से मुझे कोई हानि न पहुँचेगी, तो वह उसे हर्गिज न काटेगा।'

मृणालिनी ने जब देखा कि कैलाश पर इस वक्त भूत सवार है, तो उसने यह तमाशा न करने के विचार से कहा–'अच्छा भाई, अब यहाँ से चलो। देखो गाना शुरू हो गया है। आज मैं भी कोई चीज सुनाऊँगी।' यह कहते हुए उसने कैलाश का कन्धा पकड़कर चलने का इशारा किया और कमरे से निकल गयी, मगर कैलाश विरोधियों का शंका-समाधान करके ही दम लेना चाहता था। उसने साँप की गर्दन पकड़कर जोर से दबायी, इतनी जोर से दबायी कि उसका मुँह लाल हो गया, देह की सारी नसें तन गयीं। साँप ने अब तक उसके हाथों ऐसा व्यवहार न देखा था। उसकी समझ में न आता था कि यह मुझसे क्या चाहते हैं? उसे शायद भ्रम हुआ कि यह मुझे मार डालना चाहते हैं, अतएव वह आत्मरक्षा के लिए तैयार हो गया।

कैलाश ने उसकी गर्दन खूब दबाकर मुँह खोल दिया और उसके जहरीले दाँत दिखाते हुए बोला–जिन सज्जनों को शक हो, आकर देख लें। आया विश्वास या अब भी कुछ शक है? मित्रों ने आकर उसके दाँत देखे और चकित हो गये। प्रत्यक्ष प्रमाण के सामने सन्देह को स्थान कहाँ? मित्रों का शंका-निवारण करके कैलाश ने साँप की गर्दन ढीली कर दी और उसे जमीन पर रखना चाहा, पर वह काला गेहुँअन क्रोध से पागल हो रहा था। गर्दन नरम पड़ते ही उसने सिर उठाकर कैलाश की उँगली में जोर से काटा और वहाँ से भागा। कैलाश की उँगली से टप-टप खून टपकने लगा। उसने जोर से उँगली दबा ली और अपने कमरे की तरफ दौड़ा। वहाँ मेज की दराज में एक जड़ी रखी हुई थी, जिसे पीसकर लगा देने से घातक विष भी रफू हो जाता था।

मित्रों में हलचल बढ़ गयी। बाहर महफिल में भी खबर हुई। डॉक्टर साहब घबड़ाकर दौड़े। फौरन उँगली की जड़ कसकर बाँधी गयी और जड़ी पीसने के लिए दी गयी। डॉक्टर साहब जड़ी के कायल न थे। वह उँगली का डसा भाग नश्तर से काट देना चाहते थे, मगर कैलाश को जड़ी पर पूर्ण विश्वास था। मृणालिनी प्यानो पर बैठी हुई थी। यह खबर सुनते ही दौड़ी और कैलाश की उँगली से टपकते हुए खून को रूमाल से पोंछने लगी। जड़ी पीसी जाने लगी, पर उसी एक मिनट में कैलाश की आँखें झपकने लगीं, ओंठों पर पीलापन दौड़ने लगा। यहाँ तक कि वह खड़ा न रह सका। फर्श पर बैठ गया।

सारे मेहमान कमरे में जमा हो गये। कोई कुछ कहता था, कोई कुछ। इतने में जड़ी पीसकर आ गयी। मृणालिनी ने उँगली पर लेप किया। एक मिनट और बीता, कैलाश की आँखें बन्द हो गयीं। वह लेट गया और हाथ से पंखा झलने का इशारा किया। माँ ने दौड़कर उसका सिर गोद में रख लिया और बिजली का टेबुल-फैन लगा दिया।

डॉक्टर साहब ने झुककर पूछा–'कैलाश, कैसी तबीयत है?' कैलाश ने धीरे से हाथ उठा दिया, मगर कुछ बोल न सका।

मृणालिनी ने करुण स्वर में कहा–'क्या जड़ी कुछ असर न करेगी?' डॉक्टर साहब ने सिर पकड़कर कहा–'क्या बताऊँ, मैं इसकी बातों में आ गया। अब तो नश्तर से भी कुछ फायदा न होगा।'

आधा घण्टे तक यही हाल रहा–'कैलाश की दशा प्रतिक्षण बिगड़ती जाती थी। यहाँ तक कि उसकी आँखें पथरा गयीं, हाथ-पाँव ठण्डे हो गये, मुख की कान्ति मलिन पड़ गयी, नाड़ी का कहीं पता नहीं, मौत के सारे लक्षण दिखायी देने लगे। घर में कोहराम मच गया। मृणालिनी एक ओर सिर पीटने लगी, माँ अलग पछाड़ें खाने लगी। डॉक्टर चड्ढा को मित्रों ने पकड़ लिया नहीं तो वह नश्तर अपनी गर्दन में मार लेते।

एक महाशय बोले–कोई मन्त्र झाड़नेवाला मिले, तो सम्भव है, अभी भी जान बच जाय।

एक मुसलमान सज्जन ने इसका समर्थन किया–अरे साहब, कब्र में पड़ी हुई लाशें जिन्दा हो गयी हैं। ऐसे-ऐसे बाकमाल पड़े हुए हैं।

डॉक्टर चड्ढा बोले–'मेरी अक्ल पर पत्थर पड़ गया था कि इसकी बातों में आ गया। नश्तर लगा देता, तो यह नौबत क्यों आती? बार-बार समझाता रहा कि बेटा साँप न पालो, मगर कौन सुनता था! बुलाइये, किसी झाड़-फूँक करनेवाले को ही बुलाइये। मेरा सब-कुछ ले-ले, मैं अपनी सारी जायदाद उसके पैरों पर रख दूँगा, लँगोटी बाँधकर घर से निकल जाऊँगा, मगर मेरा कैलाश, मेरा प्यारा कैलाश उठ बैठे। ईश्वर के लिए किसी को बुलवाइये।'

एक महाशय का किसी झाड़नेवाले से परिचय था। वह दौड़कर उसे बुला लाये, मगर कैलाश की सूरत देखकर उसे मन्त्र चलाने की हिम्मत न पड़ी। बोला–अब क्या हो सकता है सरकार, जो कुछ होना था, हो चुका।

'अरे मूर्ख, यह क्यों नहीं कहता कि जो कुछ न होना था, हो चुका। जो कुछ होना था वह कहाँ हुआ? माँ-बाप ने बेटे का सेहरा कहाँ देखा? मृणालिनी का कामना-तरु क्या पल्लव और पुष्प से रंजित हो उठा? मन के वह स्वर्ण-स्वप्न जिनसे जीवन आनन्द का स्रोत बना हुआ था, क्या पूरे हो गये? जीवन के नृत्यमय तारिका-मण्डित सागर में आमोद की बहार लूटते हुए क्या उसकी नौका जलमग्न नहीं हो गयी? जो न होना था, वह हो गया!'

वही हरा-भरा मैदान था, वही सुनहरी चाँदनी एक निःशब्द संगीत की भाँति प्रकृति पर छायी हुई थी, वही मित्र-समाज था। वही मनोरंजन के सामान थे। मगर जहाँ हास्य की ध्वनि थी, वहाँ अब करुण-क्रन्दन और अश्रु-प्रवाह था।

× × ×

शहर से कई मील दूर एक छोटे-से घर में एक बूढ़ा और बुढ़िया अँगीठी के सामने बैठे जाड़े की रात काट रहे थे। बूढ़ा नारियल पीता था और बीच-बीच में खाँसता था। बुढ़िया दोनों घुटनियों में सिर डाले आग की ओर ताक रही थी। एक मिट्टी के तेल की कुप्पी ताक पर जल रही थी। घर में न चारपाई थी, न बिछौना। एक किनारे थोड़ी-सी पुआल पड़ी हुई थी। इसी कोठरी में एक चूल्हा था। बुढ़िया दिन-भर उपले और सूखी लकड़ियाँ बटोरती थी। बूढ़ा रस्सी बटकर बाजार में बेच आता था। यही उसकी जीविका थी। उन्हें न किसी ने रोते देखा, न हँसते। उनका सारा समय जीवित रहने में कट जाता था। मौत द्वार पर खड़ी थी, रोने या हँसने की कहाँ फुर्सत! बुढ़िया ने पूछा–कल के लिए सन तो है नहीं, काम क्या करोगे?

'जाकर झगड़ू साह से दस सेर सन उधार लाऊँगा।'

'उसके पहले के पैसे तो दिये ही नहीं, और उधार कैसे देगा?'

'न देगा न सही। घास तो कहीं नहीं गयी है। दोपहर तक क्या दो आने की भी न काटूँगा?'

इतने में एक आदमी ने द्वार पर आवाज दी–'भगत, भगत, क्या सो गये? जरा किवाड़ खोलो।'

भगत ने उठकर किवाड़ खोल दिये। एक आदमी ने अन्दर आकर कहा–'कुछ सुना, डॉक्टर चड्ढा बाबू के लड़के को साँप ने काट लिया।'

भगत ने चौंककर कहा–'चड्ढा बाबू के लड़के को! वही चड्ढा बाबू हैं न, जो छावनी के बँगले में रहते हैं?'

'हाँ-हाँ, वही। शहर में हल्ला मचा हुआ है। जाते हो तो जाओ, आदमी बन जाओगे।'

बूढ़े ने कठोर भाव से सिर हिलाकर कहा–'मैं नहीं जाता। मेरी बला जाय। वही चड्ढा हैं। खूब जानता हूँ। भैया को लेकर उन्हीं के पास गया था। खेलने जा रहे थे। पैरों पर गिर पड़ा कि एक नजर देख लीजिये, मगर सीधे मुँह से बात तक न की। भगवान् बैठे सुन रहे थे। अब जान पड़ेगा कि बेटे का गम कैसा होता है? कई लड़के हैं?'

'नहीं जी, यही तो एक लड़का था। सुना है, सब ने जवाब दे दिया।'

'भगवान् बड़ा कारसाज है। उस बखत मेरी आँखों से आँसू निकल पड़े थे पर उन्हें तनिक भी दया न आयी थी। मैं तो उनके द्वार पर होता, तो भी बात न पूछता।'

'तो न जाओगे? हमने जो सुना था, सो कह दिया।'

'अच्छा किया–अच्छा किया। कलेजा ठण्डा हो गया, आँखें ठण्डी हो गयीं। लड़का भी ठण्डा हो गया होगा। तुम जाओ। आज चैन की नींद सोऊँगा। (बुढ़िया से) जरा तमाखू दे-दे। एक चिलम और पीऊँगा। अब मालूम होगा लाला को! सारी साहबी निकल जायगी, हमारा क्या बिगड़ा? लड़के के मर जाने से कुछ राज तो नहीं चला गया? जहाँ छह बच्चे गये थे, वहाँ एक और चला गया, तुम्हारा तो राज सूना हो जायगा। उसी के वास्ते सबका गला दबा-दबाकर जोड़ा था न! अब क्या करोगे? एक बार देखने जाऊँगा, पर कुछ दिन बाद। मिजाज का हाल पूछूँगा।'

आदमी चला गया। भगत ने किवाड़ बन्द कर लिये, तब चिलम पर तमाखू रखकर पीने लगा।

बुढ़िया ने कहा–इतनी रात गये जाड़े-पाले में कौन जायगा?

'अरे दोपहर ही होता तो मैं न जाता। सवारी दरवाजे पर लेने आती, तो भी मैं न जाता। भूल नहीं गया हूँ। पन्ना की सूरत आज भी आँखों में फिर रही है। इसी निर्दयी ने उसे एक नजर देखा तक नहीं। क्या मैं न जानता था कि वह न बचेगा? खूब जानता था? चड्ढा भगवान् नहीं थे कि उनके एक निगाह देख लेने से अमृत बरस जाता। नहीं, खाली मन की दौड़ थी। जरा तसल्ली हो जाती। बस, इसलिए उनके पास दौड़ा गया था। अब किसी दिन जाऊँगा और कहूँगा–'क्यों साहब, कहिये, क्या रंग हैं? दुनिया बुरा कहेगी, कहे, कोई परवाह नहीं। छोटे आदमी में तो सब ऐब होते हैं। बड़ों में कोई ऐब नहीं होता, देवता होते हैं।'

भगत के लिए जीवन में यह पहला अवसर था कि ऐसा समाचार पाकर वह बैठा रह गया हो। अस्सी वर्ष के जीवन में ऐसा कभी न हुआ था कि साँप की खबर पाकर वह दौड़ा न गया हो। माघ-पूस की अँधेरी रात, चैत-बैसाख की धूप व लू, सावन-भादों की चढ़ी हुई नदी और नाले, किसी की उसने कभी परवाह न की। वह तुरन्त घर से निकल पड़ता था निःस्वार्थ, निष्काम। लेन-देन का विचार कभी दिल में आया नहीं। यह ऐसा काम ही न था। जान का मूल्य कौन दे सकता है? यह एक पुण्य कार्य था। सैकड़ों निराशों को उसके मन्त्रों ने जीवनदान दे दिया था, पर वह आज घर से कदम नहीं निकाल सका। यह खबर सुनकर सोने जा रहा है।

बुढ़िया ने कहा–'तमाखू अँगीठी के पास रखी हुई है। उसके भी आज ढाई पैसे हो गये। देती ही न थी।'

बुढ़िया यह कहकर लेटी। बूढ़े ने कुप्पी बुझायी, कुछ देर खड़ा रहा, फिर बैठ गया, अन्त को लेट गया, पर यह खबर उसके हृदय पर बोझ की भाँति रखी हुई थी। उसे मालूम हो रहा था उसकी कोई चीज खो गयी है, जैसे सारे कपड़े गीले हो गये हैं या पैरों में कीचड़ लगा हुआ है, जैसे उसके मन में कोई बैठा हुआ उसे घर से निकलने के लिए कुरेद रहा है। बुढ़िया जरा देर में खर्राटे लेने लगी। बूढ़े बातें करते-करते सोते हैं और जरा-सा खटका होते ही जागते हैं। तब भगत उठा, अपनी लकड़ी उठा ली और धीरे से किवाड़ खोले।

बुढ़िया ने पूछा–'कहाँ जाते हो?'

'कहीं नहीं, देखता हूँ कितनी रात है?'

'अभी बहुत रात है, सो जाओ।'

'नींद नहीं आती।'

'नींद काहे को आयेगी? मन तो चड्ढा के घर पर लगा हुआ है।'

'चड्ढा ने मेरे साथ कौन-सी नेकी कर दी है, जो वहाँ जाऊँ? वह आकर पैरों पड़े तो भी न जाऊँ।'

'उठे तो तुम इसी इरादे से हो।'

'नहीं री, ऐसा पागल नहीं हूँ कि जो मुझे काँटे बोये, उसके लिए फूल बोता फिरूँ।'

बुढ़िया फिर सो गयी। भगत ने किवाड़ लगा दिये और फिर आकर बैठा। पर उसके मन की कुछ ऐसी दशा थी, जो बाजे की आवाज कान में पड़ते ही उपदेश सुननेवालों की होती है। आँखें चाहे उपदेशक की ओर हों, पर कान बाजे ही की ओर होते हैं। दिल में भी बाजे की ध्वनि गूँजती रहती है। शर्म के मारे जगह से नहीं उठता। निर्दयी प्रतिघात का भाव भगत के लिए उपदेशक था, पर हृदय उस अभागे युवक की ओर था, जो इस समय मर रहा था, जिसके लिए एक-एक पल का विलम्ब घातक था।

उसने फिर किवाड़ खोले, इतने धीरे से कि बुढ़िया को खबर न हुई। बाहर निकल आया। उसी वक्त गाँव का चौकीदार गश्त लगा रहा था, बोला–'कैसे उठे भगत? आज तो बड़ी सरदी है। कहीं जा रहे हो क्या?'

भगत ने कहा–'नहीं जी, जाऊँगा कहाँ? देखता था, अभी कितनी रात है। भला, कै बजे होंगे?'

चौकीदार बोला–'एक बजा होगा और क्या! अभी थाने से आ रहा था, तो डॉक्टर चड्ढा बाबू के बँगले पर भीड़ लगी हुई थी। उनके लड़के का हाल तो तुमने सुना होगा, कीड़े ने छू लिया है। चाहे मर भी गया हो। तुम चले जाओ तो शायद बच जाय। सुना है, दस हजार देने को तैयार हैं।'

भगत–'मैं तो न जाऊँ, चाहे वह दस लाख भी दें। मुझे दस हजार या दस लाख लेकर करना क्या है; कल मर जाऊँगा, फिर कौन भोगनेवाला बैठा हुआ है?'

चौकीदार चला गया। भगत ने आगे पैर बढ़ाया। जैसे नशे में आदमी की देह अपने काबू में नहीं रहती, पैर कहीं रखता है, पड़ता कहीं है, कहता कुछ है, जबान से निकलता कुछ है, वही हाल इस समय भगत का था। मन में प्रतिकार था, पर कर्म मन के अधीन न था। जिसने कभी तलवार नहीं चलायी, वह इरादा करने पर भी तलवार नहीं चला सकता। उसके हाथ काँपते हैं, उठते ही नहीं।

भगत लाठी खट-खट करता लपका चला जाता था। चेतना रोकती थी, पर उपचेतना ठेलती थी। सेवक स्वामी पर हावी था।

आधी राह निकल जाने के बाद सहसा भगत रुक गया। हिंसा ने क्रिया पर विजय पायी–'मैं यों ही इतनी दूर चला आया। इस जाड़े-पाले में मरने की मुझे क्या पड़ी थी, आराम से सोया क्यों नहीं; नींद न आती, न सही, दो-चार भजन ही गाता। व्यर्थ इतनी दूर दौड़ा आया! चड्ढा का लड़का रहे या मरे, मेरी बला से। मेरे साथ इन्होंने कौन-सा सलूक किया था कि मैं उनके लिए मरूँ, दुनिया में हजारों मरते हैं, हजारों जीते हैं। मुझे किसी के मरने-जीने से क्या मतलब?'

मगर उपचेतना ने अब एक दूसरा रूप धारण किया, जो हिंसा से बहुत-कुछ मिलता-जुलता था–वह झाड़-फूँक करने नहीं जा रहा है, वह देखेगा कि लोग क्या कर रहे हैं। डॉक्टर साहब का रोना-पीटना देखेगा कि किस तरह पछाड़ें खाते हैं। वह देखेगा कि बड़े लोग भी छोटों की ही भाँति रोते हैं या सबर भी कर जाते हैं। वे लोग, जो विद्वान् होते हैं, सबर कर जाते होंगे। हिंसा-भाव को यों धीरज देता हुआ वह फिर आगे बढ़ा।

इतने में दो आदमी आते दिखायी दिये। दोनों बातें करते चले आ रहे थे। 'चड्ढा बाबू का घर उजड़ गया, वही तो एक लड़का था।'

भगत के कान में यह आवाज पड़ी। उसकी चाल और भी तेज हो गयी। थकान के मारे पाँव न उठते थे। शिरो भाग इतना बढ़ा जाता था, मानो अब मुँह के बल गिर पड़ेगा। इस तरह कोई 10 मिनट चला होगा कि डॉक्टर साहब का बँगला नजर आया। बिजली की बत्तियाँ जल रही थीं, मगर सन्नाटा छाया हुआ था। रोने-पीटने की आवाज भी न आती थी। भगत का कलेजा धक्-

धक् करने लगा। कहीं मुझे बहुत देर तो नहीं हो गयी, वह दौड़ने लगा। अपनी उम्र में वह इतना तेज कभी न दौड़ा था। बस, यही मालूम होता था, मानो उसके पीछे मौत दौड़ी आ रही है।

दो बज गये थे। मेहमान विदा हो गये। रोनेवालों में केवल आकाश के तारे रह गये थे और सभी रो-रोकर थक गये थे। बड़ी उत्सुकता के साथ लोग रह-रहकर आकाश की ओर देखते थे कि किसी तरह सुबह हो और लाश गंगा की गोद में दी जाय।

सहसा भगत ने द्वार पर पहुँचकर आवाज दी। डॉक्टर साहब समझे कोई मरीज आया होगा। किसी और दिन उन्होंने उस आदमी को दुत्कार दिया होता, मगर आज बाहर निकल आये। देखा, एक बूढ़ा आदमी खड़ा है–कमर झुकी हुई, पोपला मुँह, भौंहें तक सफेद हो गयी थीं। लकड़ी के सहारे काँप रहा था। बड़ी नम्रता से बोले–'क्या है भाई, आज तो हमारे ऊपर ऐसी मुसीबत पड़ गयी है कि कुछ कहते नहीं बनता, फिर कभी आना। इधर एक महीना तक शायद मैं किसी मरीज को न देख सकूँगा।'

भगत ने कहा–'सुन चुका हूँ बाबूजी, इसीलिए आया हूँ। भैया कहाँ हैं? जरा मुझे दिखा दीजिये। भगवान् बड़ा कारसाज है, मुरदे को जिला सकता है। कौन जाने, अब भी उसे दया आ जाय।'

चड्ढा ने व्यथित स्वर से कहा–'चलो देख लो मगर तीन-चार घण्टे हो गये। जो कुछ होना था, हो चुका। बहुतेरे झाड़ने-फूँकनेवाले देख-देखकर चले गये।'

डॉक्टर साहब को आशा तो क्या होती? हाँ, बूढ़े पर दया आ गयी। अन्दर ले गये। भगत ने लाश को एक मिनट तक देखा। तब मुस्कराकर बोला–'अभी कुछ नहीं बिगड़ा है, बाबू जी! वह नारायण चाहेंगे, तो आधा घण्टे में भैया उठ बैठेंगे। आप नाहक दिल छोटा कर रहे हैं। जरा कहारों से कहिये, पानी तो भरें।'

कहारों ने पानी भर-भर कैलाश को नहलाना शुरू किया। पाइप बन्द हो गया था। कहारों की संख्या अधिक न थी, इसलिए मेहमानों ने अहाते के बाहर कुएँ से पानी भर-भरकर कहारों को दिया, मृणालिनी कलसा लिये पानी ला रही थी। बूढ़ा भगत खड़ा मुस्करा-मुस्कराकर मन्त्र पढ़ रहा था, मानो विजय उसके सामने खड़ी है। जब एक मन्त्र समाप्त हो जाता, तब वह एक जड़ी कैलाश को सुँघा देता। इस तरह न जाने कितने घड़े कैलाश के सिर पर डाले गये और न जाने कितनी बार भगत ने मन्त्र फूँका। आखिर जब ऊषा ने अपनी लाल-लाल आँखें खोलीं, तो कैलाश की भी लाल-लाल आँखें खुल गयीं। एक क्षण में उसने अँगड़ाई ली और पानी पीने को माँगा। डॉक्टर चड्ढा ने दौड़कर नारायणी को गले लगा लिया। नारायणी दौड़कर भगत के पैरों पर गिर पड़ी और मृणालिनी कैलाश के सामने आँखों में आँसू भरे पूछने लगी–'अब कैसी तबीयत है?'

एक क्षण में चारों तरफ खबर फैल गयी। मित्रगण मुबारकवाद देने आने लगे। डॉक्टर साहब बड़े श्रद्धा-भाव से हर एक के सामने भगत का यश गाते फिरते थे। सभी लोग भगत के दर्शनों के लिए उत्सुक हो उठे, मगर अन्दर जाकर देखा, तो भगत का कहीं पता न था। नौकरों ने कहा–'अभी तो यहीं बैठे चिलम पी रहे थे। हम लोग तमाखू देने लगे, तो नहीं ली, अपने पास से तमाखू निकालकर भरी।'

यहाँ तो भगत की चारों ओर तलाश होने लगी और भगत लपका हुआ घर चला जा रहा था कि बुढ़िया के उठने के पहले पहुँच जाऊँ।

जब मेहमान लोग चले गये, तो डॉक्टर साहब ने नारायणी से कहा–'बुड्ढा न जाने कहाँ चला गया। एक चिलम तमाखू का भी रवादार न हुआ।'

नारायणी–'मैंने तो सोचा था, इसे कोई बड़ी रकम दूँगी।'

चड्ढा–'रात को मैंने नहीं पहचाना, पर जरा साफ हो जाने पर पहचान गया। एक बार यह एक मरीज को लेकर आया था। मुझे अब याद आता है कि मैं खेलने जा रहा था और मरीज को देखने से इनकार कर दिया था। आज उस दिन की बात याद करके मुझे जितनी ग्लानि हो रही है, उसे प्रकट नहीं कर सकता। मैं उसे खोज निकालूँगा और पैरों पर गिरकर अपना अपराध क्षमा कराऊँगा। वह कुछ लेगा नहीं, यह जानता हूँ, उसका जन्म यश की वर्षा करने ही के लिए हुआ है। उसकी सज्जनता ने मुझे ऐसा आदर्श दिखा दिया है, जो अब से जीवन-पर्यन्त मेरे सामने रहेगा।'

● **प्रेमचन्द**

अभ्यास प्रश्न

● विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों में रेखांकित अंशों की व्याख्या और तथ्यपरक प्रश्नों के उत्तर दीजिये–

(क) मोटर चली गयी। बूढ़ा कई मिनट तक मूर्ति की भाँति निश्चल खड़ा रहा। संसार में ऐसे मनुष्य भी होते हैं, जो अपने आमोद-प्रमोद के आगे किसी की जान की भी परवाह नहीं करते, शायद इसका उसे अब भी विश्वास न आता था। सभ्य संसार इतना निर्मम, इतना कठोर है, इसका ऐसा मर्मभेदी अनुभव अब तक न हुआ था। वह उन पुराने जमाने के जीवों में था, जो लगी हुई आग को बुझाने, मुर्दे को कन्धा देने, किसी के छप्पर को उठाने और किसी कलह को शान्त करने के लिए सदैव तैयार रहते थे। जब तक बूढ़े को मोटर दिखायी दी, वह खड़ा टकटकी लगाये उस ओर ताकता रहा।

प्रश्न (i) प्रस्तुत गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंशों की व्याख्या कीजिए।

(iii) पुराने जमाने के जीवों का व्यवहार कैसा था?

(iv) भगत को किस बात पर विश्वास नहीं हो रहा था?

(v) भगत के अनुसार सभ्य संसार कैसा है?

(ख) 'अरे मूर्ख, यह क्यों नहीं कहता कि जो कुछ न होना था, हो चुका। जो कुछ होना था वह कहाँ हुआ? माँ-बाप ने बेटे का सेहरा कहाँ देखा? मृणालिनी का कामना-तरु क्या पल्लव और पुष्प से रंजित हो उठा? मन के वह स्वर्ण-स्वप्न जिनसे जीवन आनन्द का स्रोत बना हुआ था, क्या पूरे हो गये? जीवन के नृत्यमय तारिका-मण्डित सागर में आमोद की बहार लूटते हुए क्या उसकी नौका जलमग्न नहीं हो गयी? जो न होना था, वह हो गया।'

प्रश्न (i) प्रस्तुत गद्यांश के पाठ एवं लेखक का नाम लिखिए।

(ii) रेखांकित अंशों की व्याख्या कीजिए।

(iii) माँ-बाप ने क्या नहीं देखा?

(iv) 'नौका जलमग्न होना' का क्या अर्थ है?

(v) मृणालिनी का कामना-तरु क्या था?

(ग) वही हरा-भरा मैदान था, वही सुनहरी चाँदनी एक निःशब्द संगीत की भाँति प्रकृति पर छायी हुई थी, वही मित्र-समाज था। वही मनोरंजन के सामान थे। मगर जहाँ हास्य की ध्वनि थी, वहाँ अब करुण-क्रन्दन और अश्रु-प्रवाह था।

प्रश्न (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंशों की व्याख्या कीजिए।

(iii) प्रकृति पर क्या छायी हुई थी?

(घ) वह एक जड़ी कैलाश को सुँघा देता। इस तरह न जाने कितने घड़े कैलाश के सिर पर डाले गये और न जाने कितनी बार भगत ने मन्त्र फूँका। आखिर जब ऊषा ने अपनी लाल-लाल आँखें खोलीं, तो कैलाश की भी लाल-लाल आँखें खुल गयीं। एक क्षण में उसने अँगड़ाई ली और पानी पीने को माँगा। डॉक्टर चड्ढा ने दौड़कर नारायणी को गले लगा लिया। नारायणी दौड़कर भगत के पैरों पर गिर पड़ी और मृणालिनी कैलाश के सामने आँखों में आँसू भरे पूछने लगी–'अब कैसी तबीयत है?'

प्रश्न (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंशों की व्याख्या कीजिए।

(iii) आँखें खुलते ही अँगड़ाई लेते हुए कैलाश ने क्या माँगा?

(ङ) चड्ढा–'रात को मैंने नहीं पहचाना, पर जरा साफ हो जाने पर पहचान गया। एक बार यह एक मरीज को लेकर आया था। मुझे अब याद आता है कि मैं खेलने जा रहा था और मरीज को देखने से इन्कार कर दिया था। आज उस दिन की बात याद करके मुझे जितनी ग्लानि हो रही है, उसे प्रकट नहीं कर सकता। मैं उसे खोज निकालूँगा और पैरों पर गिरकर अपना अपराध क्षमा कराऊँगा। वह कुछ लेगा नहीं, यह जानता हूँ, उसका जन्म यश की वर्षा करने ही के लिए हुआ है। उसकी सज्जनता ने मुझे ऐसा आदर्श दिखा दिया है, जो अब से जीवन-पर्यन्त मेरे सामने रहेगा।'

प्रश्न (i) उपर्युक्त गद्यांश का सन्दर्भ लिखिए।

(ii) रेखांकित अंशों की व्याख्या कीजिए।

(iii) ग्लानि किसको हो रही थी?

(iv) डॉ0 चड्ढा किस आदर्श पर जीवन भर चलने का संकल्प लेते हैं?

(v) प्रस्तुत पंक्तियों में भगत की किस चारित्रिक विशेषता का पता चलता है?

2. प्रेमचन्द के जीवन-परिचय एवं भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
3. प्रेमचन्द के जीवन एवं साहित्यिक परिचय का उल्लेख कीजिए।
   अथवा प्रेमचन्द की जीवनी एवं साहित्यिक सेवाएँ स्पष्ट कीजिए।
4. प्रेमचन्द के जीवन-परिचय एवं कृतियों का उल्लेख कीजिए।

● लघु उत्तरीय प्रश्न

1. क्या 'मन्त्र' एक मर्मस्पर्शी कहानी है, तो क्यों?
2. 'भगवान् बड़ा कारसाज है।' इस वाक्य का भाव स्पष्ट कीजिए।
3. अन्ततः भगत डॉ0 चड्ढा के पुत्र को बचाने क्यों चला गया?
4. डॉ0 चड्ढा के सामने भगत ने अपनी पगड़ी उतारकर क्यों रख दी?
5. कैलाश को सर्प ने क्यों काट लिया था?
6. 'मन्त्र' कहानी का सन्देश अपने शब्दों में लिखिए।
7. नारायणी ने भगत के लिए क्या सोचा था?

8. कैलाश के जन्म-दिवस की तैयारियों को अपने शब्दों में लिखिए।
9. डॉ0 चड्ढा और बूढ़े से सम्बन्धित दस वाक्य लिखिए।
10. इस पाठ से आपको क्या शिक्षा मिलती है?

● अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

1. 'भगवान् बड़ा कारसाज है' यह वाक्य कहानी में कितनी बार आया है?
2. निम्नलिखित में से सही वाक्य के सम्मुख **सही** (✓) का चिह्न लगाइये–
   (अ) भगत कठोर हृदय का व्यक्ति नहीं था। ( )
   (ब) कैलाश नारायणी का पुत्र था। ( )
   (स) बुढ़िया ने ही भगत को दूसरी बार डॉ0 चड्ढा के यहाँ भेजा था। ( )
   (द) अन्ततः कैलाश की मृत्यु हो गयी थी। ( )
3. प्रेमचन्द का जन्म एवं मृत्यु सन् बताइये।
4. प्रेमचन्द किस युग के लेखक हैं?
5. कैलाश और मृणालिनी कौन थे?
6. 'हंस' पत्रिका के संस्थापक कौन थे?

● व्याकरण-बोध

1. **निम्नलिखित मुहावरों का अर्थ बताकर वाक्य-प्रयोग कीजिए–**
   आँखें ठण्डी होना, चैन की नींद सोना, किस्मत ठोंकना, कलेजा ठण्डा होना, हाथ से चला जाना, सूरत आँखों में फिरना।
2. **निम्नलिखित शब्दों का सन्धि-विच्छेद करते हुए सन्धि का नाम लिखिए–**
   पल्लव, विद्यालय, सज्जन, औषधालय, निश्चल, निःस्वार्थ।
3. **निम्नलिखित शब्दों में उपसर्ग बताइये–**
   उपदेशक, निर्दयी, निवारण, आमोद, प्रतिघात।
4. **निम्नलिखित समस्त पदों में समास-विग्रह कीजिए और समास का नाम लिखिए–**
   महाशय, कामना-तरु, सावन-भादों, जीवनदान, जलमग्न, आत्मरक्षा, मित्र-समाज।

● आन्तरिक मूल्यांकन

1. प्रेमचन्द की रचनाओं की एक सूची तैयार कीजिए।
2. प्रेमचन्द ने अनेक सामाजिक कहानियाँ लिखी हैं, उनकी सामाजिक कहानियों की एक सूची बनाइए।

● ● ●